International Journal of Multidisciplinary Research and Development
Online ISSN: 2349-4182, Print ISSN: 2349-5979, Impact Factor: RJIF 5.72
www.allsubjectjournal.com
Volume 4; Issue 3; March 2017; Page No. 273-275

आमेर रियासत की भौगोलिक एवं सामरिक स्थिति

भारत आर्य
इतिहास विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान, भारत

प्रस्तावना

प्राचीन काल में आमेर को अम्बावती, अमरपुरा तथा अमरगढ़ के नाम से जाना जाता था। कुछ लोगों को कहना है कि अम्बकेश्वर भगवान शिव के नाम पर यह नगर 'आमेर' बना, परन्तु अधिकांश लोग और तार्किक अर्थ अयोध्या के राजा भक्त अम्बरीश के नाम से जोड़ते हैं। कहते हैं भक्त अम्बरीश ने दीन–दुखियों के लिए राज्य के भरे हुए कोठार और गोदाम खोल रखे थे। सब तरफ़ सुख और शांति थी परन्तु राज्य के कोठार दीन–दुखियों के लिए खाली होते रहे। भक्त अम्बरीश से जब उनके पिता ने पूछताछ की तो अम्बरीश ने सिर झुकाकर उत्तर दिया कि ये गोदाम भगवान के भक्तों के गोदाम है और उनके लिए सदैव खुले रहने चाहिए। भक्त अम्बरीश को राज्य के हितों के विरुद्ध कार्य करने के लिए आरोपी ठहराया गया और जब गोदामों में आई माल की कमी का ब्यौरा अंकित किया जाने लगा तो लोग और कर्मचारी यह देखकर दंग रह गए कि कल तक जो गोदाम और कोठार खाली पड़े थे, वहाँ अचानक रात भर में माल कैसे भर गया।

भक्त अम्बरीश ने इसे ईश्वर की कृपा कहा। चमत्कार था यह भक्त अम्बरीश का और उनकी भक्ति का। राजा नतमस्तक हो गया। उसी वक्त अम्बरीश ने अपनी भक्ति और आराधना के लिए अरावली पहाड़ी पर इस स्थान को चुना, उनके नाम से कालांतर में अपभ्रंश होता हुआ अम्बरीश से 'आमेर' या 'आमेर' बन गया।

आम्बेर पर कछवाहा वंश के शासकों का शासन बारहवीं शताब्दी से आरम्भ होता है। वस्तुतः कछवाहा अपने को अयोध्या नरेश रामचन्द्र के ज्येष्ठ पुत्र कुश के वंशज होना मानते हैं। कर्नल जेम्स टॉड ने इन्हें कुश के वंशज होने से कुशवाहा नाम पड़ना तथा कालान्तर में बिगड़कर कछवाहा हो जाना बताया है। एक कानून समिति का गठन किया गया।

यों किसी प्राचीन लेख में इनको कुशवाहा नहीं लिखा गया है। उनमें इन्हें 'कच्छपघात' या 'कच्छपारि' ही लिखा गया है। अतः कनिंघम के अनुसार 'कच्छवा' शब्द, संस्कृत शब्द 'कच्छप' से तथा 'ह' संस्कृत शब्द 'हन' से बना है। 'हन' व 'घात' शब्द के एक ही अर्थ होते हैं। उन्होंने वि.सं. 1050 के ग्वालियर के सास बहू के मन्दिर के शिलालेख में उल्लेखित कच्छपघात को कछवाहा से सम्बन्धित माना है। मानचरित काव्य के रचयिता अमृतराज कवि ने कछवाहों की उत्पत्ति 'कच्छप' या 'कुर्म' से मानी है, जो कि भगवान विष्णु के द्वितीय अवतार थे। पृथ्वीराज रासो के लेखक चन्द्रबरदाई ने कछवाहों के लिए काकुष्ठा शब्द का प्रयोग किया है, जिससे प्रतीत होता है कि इनकी उत्पत्ति इक्ष्वाकु के पौत्र काकुष्ठा से हुई है। इस प्रकार कछवाहा वंश के सन्दर्भ में भिन्न–भिन्न अवधारणाएँ प्रचलित हैं।

वस्तुतः कछवाहा राजपूत अयोध्या के सूर्यवंशी राजा रामचन्द्र के पुत्र 'कुश' के वंशज माने जाते हैं। इससे स्पष्ट है कि आरम्भ में इनका राज्य अयोध्या में था। राजा शिशुनाग के आक्रमण के परिणामस्वरूप कछवाहों को अपना पैतृक राज्य छोड़कर बिहार में सोन नदी के किनारे रोहतास में आकर बसना पड़ा। इन्होंने यहाँ पर रोहतासगढ़ के किले का निर्माण करवाया। कालान्तर में उनकी एक शाखा के वीर पुरूष 'नल' ने मालवा तथा नरवर पर अधिकार स्थापित किया जो कि पूर्व में 'निषाधदेश' कहलाता था। नरवर के कछवाहों पर कुछ समय पश्चात् कन्नौज के प्रतिहारों ने अधिकार कर लिया था, परन्तु शीघ्र ही ये पुनः स्वतन्त्र हो गए तथा इन्होंने ग्वालियर पर भी अपना अधिकार स्थापित कर लिया। वि.सं. 1034 वैशाख शुक्ल 5 के एक शिलालेख से विदित होता है कि उस समय ग्वालियर पर लक्ष्मण का पुत्र वज्रदामन कछवाहा शासन करता था। वज्रदामन ने ही कन्नौज के प्रतिहार शासक विजयपाल से गोपान्द्रि (ग्वालियर) का किला छीन लिया तथा महाराजाधिराज की पदवी धारण की। इनके पुत्र मंगलराज के दो पुत्रों कीर्तिराज तथा सुमित्र से इनकी दो शाखाएँ चलीं। बड़े पुत्र कीर्तिराज के वंशज कुतुबुद्दीन ऐबक (वि.सं. 1263) के समय तक ग्वालियर के शासक रहे, परन्तु छोटे पुत्र सुमित्र को करौली के नीन्दड़ली गाँव की जागीर मिली। सुमित्र के वंशज ईसासिंह की जागीर में बरेली (करौली) था तथा यह जागीर बहुत छोटी थी। ईसासिंह के पौत्र दुल्हराय ने अपने पिता सोढ़देव जी से आज्ञा लेकर दौसा पर आक्रमण कर अपनी जागीर का विस्तार करना आरम्भ किया।

आमेर की भौगोलिक एवं सामरिक विषेषताएँ

जयपुर नगर के राजपूत कछवाहा (कुषवाहा) राजवंष के राजा सवाई जयसिंह ने ईस्वी सन् 1727 में बसाना प्रारम्भ किया था, इससे पूर्व इस क्षेत्र की राजधानी आमेर थी, जो नये बसाये गये जयपुर नगर से उत्तर दिषा में लगभग 8 कि.मी. दूर है, अब वर्तमान में जयपुर नगर की सीमान्तर्गत जयपुर का ही एक भाग है। जयपुर से लगभग 08 कि.मी. उत्तर में एक पर्वतीय ढलान पर अवस्थित आमेर मीणों का उत्कर्ष एवं पराभव क्षेत्र तथा कछवाहा शासकों की पूरानी राजधानी होने के अलावा ऐतिहासिक और पुरातात्विक महत्व का प्राचीन नगर है। प्राचीन समय में ढूंढाड़ की राजधानी की राजधानी के रूप में प्रसिद्ध आमेर को साहित्यिक ग्रन्थों और षिलालेखों में आमेर, अम्बिकापुर, अम्बर, अम्बरीष, अम्बावती, आम्रदाद्रि इत्यादि विविध नामों से अभिहित किया गया है। आमेर के नामकरण को लेकर अनेक किंवदंतियां प्रचलित रही है। ख्यातों में बताया गया है कि अम्बा भक्त कांकिल ने इस क्षेत्र को आमेर के नाम से सम्बोधित किया। जनश्रुति के अनुसार अयोध्या के राजा मान्धाता के पुत्र अम्बरीष ने यहां पर तप किया था, उन्हीं के नाम पर नामकरण हुआ। आमेर स्थित संघी झूथाराम मंदिर से उपलब्ध मिर्जा राजा जयसिंह के शासन काल के वि.सं. 1714 (1657 ई.) के षिलालेख में आमेर नगर का नाम अम्बावती मिलता है और इसे ढूँढाड़ की राजधानी बताया गया है। यह षिलालेख आज भी पुरातत्त्व एवं संग्रहालय विभाग, राजस्थान में सुरक्षित है। अम्बावती दुर्गा का ही एक स्वरूप है और यह नामकरण उसी के नाम पर हुआ है। मीणा और राजपूत दोनों शक्ति के उपासक हैं। इसकी पुष्टि दसवीं शताब्दी के एक मूर्ति फलक से होती है। टॉड तथा कनिंघम ने अम्बिकेष्वर से ही आमेर नामकरण माना है जिसका प्रतीक षिव मंदिर पुरानी नगरी के मध्य एक कुण्ड के समीप स्थित है। कछवाहा वंषावली से जानकारी

मिलती है कि पुरातन खण्डहरों से अम्बिकेष्वर (शिव) की मूर्ति प्राप्त होने के कारण यह नगर अम्बिकेश्वर कहलाया। राजपुताना के इतिहास के अनुसार किसी समय अत्यधिक आम्र वृक्ष होने के कारण यह क्षेत्र आम्रदाद्रि के नाम से विख्यात हुआ। जगदीश सिंह गहलोत कछवाहों के इतिहास में बताते हैं कि महाराणा कुम्भा के समय के अभिलेख में आमेर को आम्रदाद्रि नाम दिया गया है।

भौगोलिक परिचय

आमेर राज्य 26.59 एवं 27.23 आक्षांश एवं देशान्तर के बीच स्थित है। इसका क्षेत्रफल 39.5 कि.मी. है। आमेर में बाण गंगा और ढूंढ नदी का प्रवाह है। आमेर में झील, बांध, तालाब और कुण्ड आदि है। जनसाधारण के लिए सागर कुण्ड तथा अन्य छोटे–छोटे कुण्ड, बावड़ियां आमेर में बहुतायत से थी इनको पूर्व के मीणा शासकों ने बनवाया था। इनमें दर्शनीय स्थल की दृष्टि से पन्ना मीणा का कुण्ड प्रसिद्ध है। इसके आगे हर्षनाथ भैरू के समीप पर्वत स्थित सागर नामक बड़ा तालाब है। यह वर्षा के दिनों में जल से भर जाता है। नगर के पश्चिमी पहाड़ियों के बीच आथूनी कुण्ड और इनके शीर्ष पर पहाड़ों से गिरता झरना और एक तालाब से जुड़ा शिवालय, आमेर बसने से पूर्व की धरोहर है। इसके एक ओर जयगढ़ दुर्ग और दूसरी तरफ पहाड़ की नैसर्गिक शोभा देखने के लिए दूर–दूर से पर्यटक आते हैं। नैसर्गिक सौन्दर्य से फलीभूत आमेर की जलवायु शुष्क और गर्म है। ऊँचाई पर होने के कारण यहां जयपुर के मुकाबले में सर्दी अधिक होती है। यहां पर औसत वर्षा होती है तथा खनिज सम्पदा में लोहा, कांसा, जिंक, ताम्बा, स्टोन, चीनी मिट्टी, बेलामाइन स्टोन आदि प्रमुख रूप से मिलते हैं। आमेर राज्य की भूमि अत्यधिक उपजाऊ होने के कारण यहां गेहूं, बाजरा, दलहन, सब्जी आदि की पैदावार अच्छी होती है।

प्राकृतिक जल सुविधा, वनस्पतिक एवं खनिज सम्पदा और ऊपजाऊ भूमि के कारण आमेर का विकास हुआ तथा आर्थिक स्थिति मजबूत हुई। इसके कारण यहाँ के लोगों का जीवन काफी अच्छा था। 'मुक्तक संग्रह' से पता चलता है कि यहां के लोग अनार के दानों की भांति चमकते थे। यह व्यापार का अच्छा केन्द्र था। भारत भ्रमण के अनुसार आमेर उन्नत अवस्था में था। प्राकृतिक जल, ऊपजाऊ भूमि, खनिज सम्पदा से परिपूर्ण होने के कारण तथा सुदृढ़ राजनीतिक व्यवस्था के कारण जनसंख्या में बढ़ोतरी होती गयी और धीरे–धीरे आमेर एक नगर का स्वरूप लेता गया।

सामरिक स्थिति

सामरिक दृष्टि से दुर्गों का विशेष महत्व होने के कारण दुर्ग प्रशासन में दुर्गपाल अथवा किलेदार का विशेष स्थान होता था। किलेदार राजा का विश्वास पात्र होता था। उस पर किले की रक्षा एंव संपूर्ण व्यवस्था का दायित्व होता था। मुसरिफ नामक अधिकारी किलेदार के नियंत्रण में होता था। किले में कार्यरत सैनिकों का विवरण रखना, उनके अस्त्रों–शस्त्रों की जाँच करना एंव उन्हें आवश्यकतानुसार नए अस्त्र–शस्त्र प्रदान करना मसर्रिफ के प्रमुख कार्य थे। हाजरी बही से प्राप्त होता है कि जिस क्षेत्र में दुर्ग स्थित होता था और जहां विशेष खांप की जागीरे अधिक होती थीं, वहां उस खांप के व्यक्तियों को दुर्ग रक्षा के लिए नही लगाया जाता था। जोधपुर दुर्ग की रक्षा के लिए चौहानों व राठौड़ों की सेवाएं कम ली जाती थी। ऐसा विद्रोह की संभावना को कम करने के लिए किया जाता था।

आमेर दुर्ग – दुल्हेराय के पुत्र कां किलदेव ने ईस्वी 1036 मे आमेर के मीण शासको से आमेर का दुर्ग छीना। उस समय आमेर दुर्ग का उत्तर व दक्षिण दिशाओं में काफी बडे क्षेत्र पर शासन था। अतः विश्वास किया जा सकता है कि आमेर दुर्ग का निर्माण मीणा शासकों द्वारा करवाया गया। बाद के कई सौ वर्ष में कच्छवाहों ने इसमें अनके निर्माण करवाये। वर्तमान जयपुर नगर से लगभग 11 किलोमीटर दूर एक पहाडी के शिखर पर यह दुर्ग स्थित है। इस अजेय दुर्ग का सौंदर्य इसकी चारदीवारी के भीतर मौजूद इसके चार स्तरीय लेआउट प्लान में स्पष्ट दिखाई पड़ता है, जिसमें लाल बलुआ पत्थर और संगमरमर से निर्मित दीवान–ऐ–आम या आम जनता के लिए विशाल प्रांगण, दीवान–ऐ–ख़ास या निजी प्रयोग के लिए बना प्रांगण, भव्य शीश महल या जय मंदिर तथा सुख निवास शामिल हैं, जिन्हें गर्मियों में ठंडा रखने के लिए दुर्ग के भीतर ही कृत्रिम रूप से बनाये गए पानी के झरने इसकी समृद्धि की कहानी कहते हैं। इसीलिये, यह आमेर दुर्ग 'आमेर महल' के नाम से भी जाना जाता है। राजपूत महाराजा अपने परिवारों के साथ इस महल में रहा करते थे। महल के प्रवेश द्वार पर, किले के गणेश द्वार के साथ चौतन्य सम्प्रदाय की आराध्य माँ शिला देवी का मंदिर स्थित है।

आमेर का किला, जयगढ़ दुर्ग के साथ, अरावली पर्वत श्रृंखला पर चील के टीले के ठीक ऊपर इस प्रकार स्थित है कि ये दो अलग अलग किले होते हुए भी समग्र रूप में एक विशाल संरचना का रूप लेते हुए दिखाई पड़ते हैं क्योंकि दोनों किले ना सिर्फ एक दूसरे के बेहद करीब स्थित हैं, बल्कि एक सुरंग के रास्ते से दोनों एक दूसरे से जुड़े हुए भी हैं। आमेर के किले से जयगढ़ के किले तक की यह सुरंग इस उद्देश्य से बनायी गयी थी कि युद्ध के समय में राज परिवार के लोग आसानी से आमेर के किले से जयगढ़ के किले में पहुँच सकें, जो कि आमेर के किले की तुलना में अधिक दुर्जेय है।

जयगढ – जयपुर राज्य का सबसे दुर्गम गढ जयगढ है इसका निर्माण मिर्जा राजा जयसिंह ने (ई. 1620 से 1667) में करवाया था। यह 500 फुट ऊँची चोटी पर स्थित है। इसके चारो ओर मजबूत चार दीवारी बनाई गई है। किले में स्थित दिवा बुर्ज सबसे ऊँची है। यह बहुत विशाल दुर्ग हैं इसमें बहुत से उद्यान, मन्दिर, भवन, महल, कुप आदि स्थित हैं दुर्ग में प्रवेश के तीन द्वार है । दुर्ग परिसर में कई सुरगें है जिन्हें गुप्तचरों तथा आपतकालिन व्यवस्था के लिये काम में लाया जाता था।

दुर्गों का उपयोग

सुरक्षात्मक युद्ध दुर्गों में रहकर ही किये जाते थे। बाहरी आक्रमण के समय यदि शत्रुदल अधिक शक्तिशाली होता था तो खुले मैदान में युद्ध करना अहितकर समक्षकर राजा दुर्ग में सेना सहित शरण ले लेते थे और दुर्ग के द्वार बंद करवा देते थे। जब शासक किलों में सुरक्षित रहते हुए शत्रु का मुकाबला करता था तो इस युद्ध को षाढ़ झालणोंष कहा जाता था। युद्ध से पूर्व दुर्ग में रसद आदि की व्यवस्था कर ली जाती थी। दुर्गों में भण्ड़ार होते थे जिनका उपयोग आपातकाल में किया जाता था। अनाज, तेल, घास, अस्त्र–शस्त्र और रसद आदि का भंड़ारण किया जाता था। महाराजा मानसिंह के काल में कृष्णाकुमारी विवाद को लेकर जयपुर की सेनाओं ने जोधपुर दुर्ग को घेर लिया। अतः उसने दुर्ग के भीतर रह कर जयपुर सेना का मुकाबला करने का निश्चय किया। जयपुर की सेना ने 13 मई 1807 को दुर्ग सेना पर प्रबल आक्रमण किया। किन्तु दुर्ग रक्षकों ने दुर्ग पर शत्रुओं का अधिकार नही होने दिया। दुर्गों में अस्त्र–शस्त्र निर्माण के कारखाने होते थे। मारवाड़ के इन दुर्गों का उपयोग भगोड़े शासकों व सैनिकों को शरण देने के लिए भी किया जाता था।

दुर्ग की रक्षा के लिए शत्रु पर आग और गर्म तेल फेकना, बारुद जलाना आदि उपाय भी काम में लिये जाते थे। 1807 में जयपुर

सेना ने जोधपुर दुर्ग का घेरा डाला था तो उस समय जोधपुर के महाराजा मानसिंह ने तीन मन तेल गरम करवा कर उसे फतेहपोल से नीचे डलवाया था जिससे जयपुर की सेना के बहुत से सैनिक जल गए तथा उन्होंने घेरा उठा लिया।

इस प्रकार आमेर शासकों ने भारतीय इतिहास के निर्माण में जो भूमिका निभाई वह अतुलनीय है। कछवाहा शासकों के संरक्षण में आम्बेर राज्य का सांस्कृतिक एवं कलात्मक क्षेत्रों में सर्वांगीण विकास हुआ। आमेर राज्य स्थापत्य, साहित्य, संगीत, मूर्तिकला आदि सभी क्षत्रों में अग्रणी रहा। प्राकृतिक जल, ऊपजाऊ भूमि, खनिज सम्पदा से परिपूर्ण होने के कारण तथा सुदृढ़ राजनीतिक व्यवस्था के कारण जनसंख्या में बढ़ोतरी होती गयी और धीरे–धीरे आम्बेर एक नगर का स्वरूप लेता गया। वर्तमान में आम्बेर जयपुर के सुभाष चौक सर्किल से सीधे जोरावर सिंह गेट पार करते हुए जलमहल की पाल के किनारे दांयी ओर कनक वृन्दावन नामक सुन्दर बाग है। बांयी ओर फूलों की घाटी है जो घाटी गेट पर समाप्त होती है। यह आम्बेर का प्राचीन रास्ता है। घाटी में आगे जयगढ़, नाहरगढ़ का किला तथा मंशा माता का मंदिर आता है। घाटी गेट पार करने के बाद हरियाली युक्त घुमावदार सड़क हैं।

सन्दर्भ

1. कर्नल जेम्स टॉड : ऐनल्ज एण्ड एण्टिक्विटीज ऑफ राजस्थान, भाग 3, पृ. 1328
2. कनिंघम : आर्कियोलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, जिल्द 2, पृ. 319
3. पृथ्वीराज रासो (उदयपुर संस्करण), भाग तृतीय, पृ. 71–74
4. जर्नल ऑफ एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल, जिल्द 31, अंक 6, पृ. 393
5. साहनी, दयाराम, आर्केलोजिकल रिमेन्स एण्ड ऐक्सक्वेशन ऐट बैराठ, पृ. 9
6. टॉड, कर्नल, एनाल्स एण्ड एण्टीक्वीटिज ऑफ राजस्थान, पृ. 346
7. कनिंघम, आर्केलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, जिल्द–2, पृ. 55
8. नाटाणी, सियाशरण, कछवाहा राजघराने की अमूल्य विरासत आमेर सवाई जयपुर, पृ. 69
9. मुक्तक संग्रह–राजस्थान पत्रिका के नगर परिक्रमा में 11–5–89, जयपुर
10. मीणा, यशोदा, मीणा जनजाति का इतिहास, पृ. 50–56
11. मण्डावा, देवी सिंह, कछवाहों का इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2010, पृ. 45
12. प्रसाद, राजीव नयन रू राजा मानसिंह आमेर, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, 2010, पृ. 48
13. सिंह, फतेह, ए ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ जयपुर, पृ. 162–165
14. सिंह, चन्द्रमणि, जयपुर राज्य का इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2008, पृ. 66
15. श्यामदलदास, वीर वीनो भाग–2, 1332
16. गहलोत, जगदीश सिंह, कछवाहों का इतिहास, पृ. 215